ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 8.4
IJAR 2016; 2(11): 549-551
www.allresearchjournal.com
Received: 22-09-2016
Accepted: 24-10-2016

Amit Raj
Research Scholar, Magadh University, Department of Pali Language, Bihar, India

Corresponding Author:
Amit Raj
Research Scholar, Magadh University, Department of Pali Language, Bihar, India

बौद्ध धर्म विश्व शांति का प्रतिक

Amit Raj

प्रस्तावना:

भगवान बुद्ध ने मानव कल्याण के लिए अनेक पारमिताओं को पूर्ण कर बोधिलाभ किया। विश्व के इतिहस में बुद्ध ही एक मात्र देदीप्यान नक्षत्र है। जिन्होने 45 वर्ष तक निरन्तु दुखी मानव समाज को अज्ञान के बन्धनों से मुक्त करने के दृढ़ संकलप के साथ 'धर्मचक्क्पवतन' किया। ''चरथ भिखवे चारिक, बहुजन हितायबहुत सुखाय लोकानुम्पाय अत्याय हिताय देवमनुस्सान''[1] इस उद्घोष के साथ भिक्षओं को चारिका करने का निर्देश दिया जिससे स्पष्ट है कि बुद्ध की समस्त देशना मानव कल्याण के लिए ही है। तथागत ने अपने उपदेशो में सर्वत्र ही समस्त लोगों की मंगलकामना की है। बुद्ध ने अपना उपदेश किसी जाति विशेष, धर्म, विशेष और राष्ट्र विषेष के लिए नहीं दिया था अपितु उनको उपदेश संपूर्ण मानवता के हित क`लिए था। उन्होने सारनाथ में 'धम्मचककाप्पवतन' करक`जिन चार आर्य सत्यों का उपदेश दिया उसमें उनकी मानव कल्याण की दृष्टि स्पष्ट होती है। उन्होने अपने प्रथम उपेदश मे ंही चार आर्यसत्यो का निरूपण किया है। उन्होन`अपनी करूणा चक्षु से समस्त लोागें को देखा कि समस्त प्राणी जाति, जराभिूत को दुख को प्रापत कर रहे है। इस सत्यका कथनापि अपलाप नही हो सकता कि सभी सुख एवं मंगल कामना करते है पर ऐसा सम्भव नही दिखता क्योकि सम्पयक् प्राा के अभाव में दुख से निवृति नही हा`सकती। इसलिए बुद्ध ने द्वितीय आर्यसत्य दुख समुदाय के रूप मे ंदुख के कारणों का निर्देश दिया। इन कारणो के अशेष निरोध से दुखः का अवशेष निरोध बतालाय तथा दुःखनिरोधगामिनी प्रतिपदा की देशना कर मुनष्य को सन्मार्ग पर चलने का निर्देश किदया।[2] उन्होने जिस मार्ग का नियपण किया वह शील, सामधि एवं प्रज्ञा की शिक्षा से समनिव्त है।[3] यह दुख निवृति का मार्ग है इहलौकिक वैभव तथा लोकोत्तर निर्वाण के लिए अमृतोपम औषधि है। इस मार्ग के अनुसारण सेसर्वत्र मंगल का आश्वासन है। बुद्ध द्वारा प्रवर्तित धर्म आदि, मध्य एवं अन्त में कल्याणकरी है। यह धर्म मैत्री, मुद्रित करूणा एवं उपेक्षाकी भावना से मुक्त है और इसमें सबकी मंगल की कामना है, 'भवतु सब्बलमंगल' की अवधारणा है। बुद्ध के उपदेशे मे बौद्धधर्म सबाक अभ्युदय तथा सबकी दुःखनिवृत्ति का मार्ग है। अतः लोकमंगल एवं शान्ति बौद्ध की मूल भावना है।

आज विश्व में सर्वत्र अशांति व्याप्त है। लोक जाति, सम्प्रदाय, धर्म क्षेत्र भाषा आदि के नाम पर आपस में मर मिट रहे है। भय का वातवरण फैला हुआ है। वर्तमान समय में लोग हिंसा को अपना रहे है, समाज में टकराव की स्थिति पैदा हो चुकी है, जबकि बुद्ध ने अहिंसा पर जो दिया है –

'न तेन अरियो होति, येन पाणानि हिंसति।
अंहिसा सब्बपाणान् अयिो ति पवुच्चति।''[1]''

अर्थात जो प्राणियों को हिंसा करता है वह आर्य नही होता, बल्कि सभी प्रकार के प्राणियों की हिंसा में विरत रहने वाले को आर्य कहा जाता है।

आज के अशांत एवं भौतिकवादी साज में शांति और सदुभाव स्थापित करने का कार्य बुद्ध के 'पंचशील' के सिद्धातो पर अमल करक`ही हो सकता है। बुद्ध ने 'पंचशील' के मायम सेसामान्य जन को ''प्राणतिपाता–वैरमणी'' कहकर प्राणी हिंसा से विरत रहने की सीख दी है। उनको अहिंसा कीसंकल्पना व्यापक और मानववाद से परिपूरित है। उन्होने न केवल यज्ञों में होने वाली हिंसा का विरोध किया बल्कि सभी प्रकार की हिंसा का विरोध किया है जिसके अन्तर्गत प्राणी हिंसा, शोषण उत्पीड़न प्रताड़ना आदि भी है। वर्ण एवं जाति के आधार पर दूसेर को हीन औन नीचं मानकर प्रताड़ित करना उनके मानवीय अधिकारो को छीनना, उनको मानव के रूप में जीने नहीं देना, मनुष्य को मनुष्य नहीं समझना भी एक प्रकार की हिंसा ही है। यही कारण है कि बुद्ध ने इस जाति व्यवस्था का वर्ण व्यवस्थाका घोर विरोध किया था। उन्होने मनुष्य की श्रेष्ठता को जन्म से नही बल्कि कर्म से माना था –

''न जचा वरालो होति, न जच्चा होति ब्राहाणो
कप्पुना वरालो होति, कम्मुना होति ब्राहाणो।''[2]

बुद्ध ने अपने उपदेशो मे पंचाशील सिद्धांत के अन्तर्गत जन साधारण को अंहिसा का पाठ तो पढ़या ही है साथ ही साथ ''आदिन्नादाना वेरमणी' कहकर चोरी से विरत रहने की भी शिक्षा दी है। ''कामसुमिच्छाचार वेरणी' कहकर उन्होने परस्त्रीगमन एवं नीति विरूद्ध कामचार से वरित रहने की शिक्षा दी है। ''मुसावदावेरणी'' कहकर झूठ बोलने विरत रहने की शिक्षा दी है। मादक पदार्थो का सेवन मुनष्य को विकेक शून्य बना देता है और वह पाशविक प्रवृतिका बन जाता है। अतः बुद्ध ने ''सुरामेयमज्ज्पादवादाता वेरणी–– कहकर मदिरा एवं अन्य मादक पदार्थो के सेवन में विरत रहने की शिक्षा दी है। बुद्ध द्वारा बताये गये उपर्युक्त पंचशील सिद्धान्त का अनुपालन कर मानव समाज सुखी जीवन पथ पर अग्रसर हो सकता है। पंचशील आज के समाज को सम्यक शिक्षा प्रदान कर मैं पूर्णतया समर्थ है। विश्व बन्धुत्व और विश्वप्रेम का एकमात्र यही सम्यक् साधन है। इसके आचरण से प्रतिस्पर्धा और प्रतिहिंसा की भावना सर्वथा नष्ट हो सकती है। आज विश्व समाज के लिए इसका आचरण अत्यंत उपादेय हो सकता है, जिससे विश्व शांति की स्थापना हो सकती है। पंचशील की व्यापकता और सार्वभौमिकता से प्रभावित होकर भारत ने अपने प्रथम प्रधानमंत्री स्वर्गीय पंडित जवाहर लाल नेहरू के नेतृत्व में इस सहअस्तित्व के सिद्धांत के रूप में अंगीकार किया। पंचशील के आधार पर भारत–चीन मैत्री की नीवं पड़ी जिसने विश्व को एक नई दिशा दी थी। इस प्रकार पंचशील का आज के मानव जीवन में अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान है।

बुद्ध ने अपने उपदेशो में घृणा और क्रोध की निंदा की है तथा जीवन–यापन के श्रेष्ठ मार्ग ब्रह–विहार का प्रज्ञापन किया है। ब्रह्म–विहार के चार अंगो मेत्ता करूणा, मुदिता तथा उपेक्खा के माध्यम से उन्होने लोक जीवन को अत्यन्त सुखमयतथा शांतिमय बनाने का निर्देश दिया है। मेत्ता भाव के द्वारा परिवार समाज देश और यहां तक कि सम्पूर्ण स्थापित की जा सकती है। मेत्ता में प्रेम बन्धुत्व व सहृदयता की भावना, व्यापक रूप से समाहित है। यह समस्त मानव जाति के व्यवहार में लाने योग्य है। इससे आपस की कटुता दुर्भावना और शत्रुता का अंतहाता है। तथा अपनत्व प्रेम तथा सम्बन्धें मे प्राढ़ता का विकास होता है इसी तरह करूणा, मुदिता और उपेक्खा के उपदेश द्वारा लोगों के सुखमय जीवन की कामना की है।

मेत्ता की भावना करने वाला किसी भी प्राणी के प्रति द्वेष भाव नही रखता है और सभी के प्रति प्रेमानुराग रखता है और असीम कल्याण व मंगलभावनासे ओत–प्रोत रहता है।

''मेताञच सब्बोलोकस्मिं, मानसं भावये अपरिमाणं।
उद्ध अधो च तिरियं च असम्बांध अवैर असपत्त।।[3]

यह संसार के सभी प्राणियों के प्रति निवैर रहने तथा दूसरो के सुखोत्कर्ष के लिए समुक्कठित रहने की उत्प्रेरणा देती है। ''सब्बेव सत्ता सुमना भवन्तु'' में विश्वम।त्री की अभावना अनुस्यूत है। करूणा दूसरो के दुःखो का अपनयन करती–परदुक्खापनयन लक्खणा करूंणा। करूणा से सभी सत्वो के दुःखों का निराकरण संभव है। इसलिए व्यक्ति को करूणान्वित होना चाहिए। मुदिता मनुष्य की अन्तश्चतना का नैतिक मनोभाव है जो शत्रुओ के उत्कर्ष में, आनन्द में सुनस्कता के अभ्यास को जन्म देता है। उपेक्षा धैर्य की भावना की दृढ़ीभूत करती है। इन चार ब्रह्मविहारो की निष्ठापूर्वक साधना यदि आज का मानव करे तो सम्पूर्ण जीवों के प्रति भ्रातृत्व एंव एकता तथ विश्वबन्धुत की भावना पल्लवित होकर प्रसारित हो सकती है।

बुद्ध की समस्त धर्म देशना मानवीय गुणों के समुन्नयन तथा मानव कल्याण के लिए प्रज्ञप्त है। उन्होने दुःखापन्न मनुष्य को दुःखी मुक्ति दिलाने के लिए अष्टांगिक मार्ग का निरूपण किया है। अष्टांगिक मार्ग सर्वोतम एवं पवित्र जीवन जीने के लिए संतुलित एवं श्रेयस्कर मार्ग है। यह अष्टांगिक मार्ग 'मध्यम मार्ग' मज्झिमा पटिपदा है जिसमें दो अतिवादो या जन्तो का परिवर्तन समुदिष्ट है। दो अतिवाद है भागविलस पूर्ण जीवन तथा आत्मनिर्यातनमयी साधना। बुद्ध ने दो अन्तों को निकट से देखकर उसकी निरर्थकता, सारहीनता तथा उद्देश्यहीनता का अनुभव किया था। उनकी दृष्टि में भवबन्धन विमुक्ति का एकमात्र साधन विराग है। जो केवल सम्यक् दृष्टि अर्थात यथार्थ ज्ञान से उत्पन्न हो सकता है। बुद्धोपदिष्ट मध्यम मार्ग सर्वथा विशिष्ट मार्ग है जो अद्यतन परिवेश में भी सर्वथा प्रासंगि है, जो आर्य जीवन के विशेधन के लिए मामात्र यही मार्ग है, दूसरा कोई मार्ग नही है। इस मार्ग पर प्रतिपन्न व्यक्ति सांसारिक संकलेशो से सर्वथा मुक्त हो जाता है क्योकि यह आद्यतन कल्याणकारी मार्ग है –

''एसोव मग्गो नत्थञञो दरसनरस विसुद्धिया।
एंत हि तुम्हे पटिपज्जथ मारस्सेत पमोहन्।।[4]

बुद्ध ने मैत्रीभाव की स्थापना हेतु सभी प्रकार के बैर भाव को शान्त करने का उपाय बताया –

''न हि वेरेन वेरानि सम्न्तीव कुदाचंन।
अवेरेन च सम्मन्ति एस धम्मो सनन्तनों।''

अर्थात् वैर से वैर कभी शान्त नहीं होता किन्तु अवैर से वैर शान्त होता है। आज सारे विश्व को शांति की चाह है। इस शांति की चाह को पूरा करने का उपाय एमात्र बुद्ध के उपदेशों में दिखाई पड़ रहा है। बुद्ध कहते है कि सहस्त्राधिक संग्रामों को जीतने की अपेक्षा आत्मविजय कहीं अधिक श्रेयस्कर है। अपने आप को जीतना ही सर्वोत्तम विजय है –

''यो सहस्सं सहस्सेन संगामे मानुसे जिने।
एकञचै जैयमत्तानं सो वे संग्रमजुत्तमो।''

विजय शत्रुता तथा घृणा को उत्पन्न करती है तथा पराभूत व्यक्ति दुःखापन्न हो सोता है। अर्त सर्वथा उपशान्त रहनेवाला व्यक्ति जय–पराजय की भावना से मुक्त रहकर सुखपूर्वक सोता है।

''जय वेरं पसवति, दुक्खं सेति पराजितो।
उपसन्तो सुखरोहित हित्वा जय पराजयं।।''

वर्तमान युग विज्ञान का युग कहा जाता है। इस विज्ञान ने संसार के सभी देशो को बहुत समीप कर दिया है। लोक आज विज्ञान के द्वारा चन्द्रमा पर पहुँचे चुके है। सागर के तल से भी तेल निकालने में हम सफल हो गये है और अनेक देशो मे ऐसे आणिवक और पमाणविक ही नही बल्कि रासायनिक उपकरण तैयार कर लिय है जिनसे वह सम्पूर्ण मानव जगत को कुछ ही पलो में समापत कर सकते है। नागासाकी और हिरोशिमा मे विज्ञान की विनाशलीला शायद धुंधली पड़ चुकी है पर ईराक की विनाश लीला अभी ताजी ही है। स्पष्टतः विज्ञान मानव का विनाश करने में पूर्ण रूपेण सक्षम है लेकिन क्या वह विज्ञान किसी भी मनुष्य में करूणा, दया, दान, मृदुता आदि मानवीय गुणों और भावों का संचार भी कर सकता है? इसका उत्तर नकारात्मक ही मिलता है इससे यही सिद्ध होता है विज्ञान के द्वारा वह शान्ति विस्तारक नहीं वरन् अशान्ति विस्तारक सिद्ध हुआ है। मनुष्य स्वभवतः शान्ति प्रिय प्राणी है। अस्तु मानव समाज शान्ति स्थापना के लिए प्रयत्नशील भी रहता है। यह शान्ति, विचारो, व्यवहारो और कार्यो से ही स्थापित हो सकती है। इसके लिए भाव शुद्धि, विचार शुद्धि और कर्म शुद्धि आवश्यक है।

बुद्ध के उपदेश में ही सभी समस्याओं का समाधान मिलता है जो जनकल्याणकारी तथा विश्वबंधुत्व के लिए सर्वथा समीचीन है। सभी अकुशल कार्यो को न करना, कुशल/कल्यणकारी कार्यो का सम्पादन करना और चित्त/मन को निर्मल रखना यहीं बुद्धो की शिक्षा है –

''सब्बपारस अकरणं कुसलस्य उपसम्पदा
सचित्त्परियोदपनं एतं बुद्धानुसासनं।।

सभी प्राणी भ्रान्त और सुख से रहे इसी कामना के साथ
भवतु सब्ब मंगल!

सन्दर्भ

1. धर्मपद 19/15
2. सुत्तनिपात वसलसुत्त पं० 34
3. सुत्तनिपात पं० 36
4. धम्मपद 276
5. धम्मद सहस्वग्गी 2/5
6. धर्मपद 60
7. धम्मपद 200
8. धम्म्पद 14/5